अध्याय : 3

विष्णु प्रभाकरजी के नाटक और प्रतिबिंबित नारी जीवन

अध्याय : 3

विष्णु प्रभाकरजी के नाटक और प्रतिबिंबित नारी जीवन

आधुनिक हिन्दी नाटक के क्षेत्र में विष्णु प्रभाकर एक ऐसा नाम है जिनकी रचना धर्मिता परम्परा में विच्छेद से अपने लेखकीय लक्ष्य का संधान करती हुई निरन्तर मानव मूल्यों की स्थापना का सर्जनात्मक अभियान करती रही है। विष्णुजी का नाटक-साहित्य हिन्दी साहित्य जगत् में एक ऐसा सर्जनात्मक स्पर्श है जिसका स्पंदन काल-सीमा से अवकाश और समय में प्रतिष्ठित होता है। अतः विष्णु प्रभाकर एक सफल नाटककार हैं। उनकी नाट्य कृतियों में वर्तमान युग की आत्मा, उसका वातावरण तथा घात-प्रतिघात, भारतीय जीवन की उथल-पुथल सबका चित्रण हुआ है।

श्री विष्णु प्रभाकरजी के सभी नाटकों में अपने जीवन के विविध पक्षों का विविध जटील समस्याओं का चित्रण किया गया है। आपने अपनी रचनाओं में भिन्न दृष्टिकोण से वर्तमान जीवन के प्रश्नों को उठाकर कलात्मक स्पर्श से व्यक्त किया है। विष्णु प्रभाकरजी के नाटकों पर विशेष रूप से गांधीजी की विचारधारा का प्रभाव दिखाई देता है। इसलिए आपने अपनी रचनाओं में मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाया है। संघर्ष नाटक की आत्मा है, प्राण है। बिना संघर्ष के कोई भी नाटक सफल नहीं होता। श्री विष्णु प्रभाकर के हाथ में नाटक एक सामाजिक कला है, जिस कला के माध्यम से समाज और समाज में प्रचलित मानव जीवन की समस्याओं का सही सुलझाव ढूँढने का प्रयास करते हैं।

श्री विष्णु प्रभाकरजी ने भले ही साहित्य की अन्य विधाओं में भी अपना लेखन-कार्य किया हो, फिर भी आज हिन्दी साहित्य जगत् मे पुराने और अनुभवी नाटककार के नाम से ही जाने जाते हैं। आपने नाटक की समस्याओं की मानसिकता का गहन अध्ययन करके नाटक को पूरी सफलता के साथ प्रस्तुत किया है।

नाटक विधा के प्रायः सभी रूपों में आपने रचना की है और उसके साथ ही आपको हिन्दी नाटक को रंगमंच, रेडिओ, टेलिवीजन आदि माध्यमों के जरिये लोकप्रिय बनाया है। अन्य विधाओं की अपेक्षा विष्णुजी का मन नाटक में ही अधिक रमा है। लगता है नाटक साहित्य-विधा आपकी प्रिय विधा है। श्री विष्णु प्रभाकरजी के मतानुसार नाटक एक ऐसा प्रभावी माध्यम है जो मानव के बाह्य तथा आन्तरिक संघर्ष की कहानी जन-मन तक पहुँचाता है। इसलिए विष्णुजी के नाटक के पात्र केवल प्रेषक का मनोरंजन ही नहीं करते, बल्कि जन-जीवन का सही दिशा-निर्देशन करने की शक्ति रखते हैं। विष्णुजी को नाटक के विविध रूपों का प्रयोग करने का सुनहरा अवसर आकाशवाणी के माध्यम से सुलभ हुआ और इसी माध्यम के द्वारा ही उनके सभी नाटक लोकप्रिय बने हैं।

विष्णुजी के नाटकों के कथानक विविध विषयों से सम्बन्धित हैं। इसलिए आपकी नाट्य-साधना का परिचय देने के लिए किसी एक ही नाट्य प्रकार को लेकर विवेचन करना बड़ी कठिन बात है। आपके नाटकों के कथानक सामाजिक, राजनीतिक और इतिहास के आधार पर लिखे गये हैं। सामाजिक नाटकों में मनोविज्ञान के धरातल पर मानव मन के द्वन्द्व को चित्रित किया गया है। मनोवैज्ञानिक धरातल पर निर्मित कथानक के पात्र किसी मनोविकार या मनोग्रंथि से पीड़ित होते हैं। समाज के उच्च तथा निम्न वर्ग की अपेक्षा विष्णुजी के नाटकों में मध्यमवर्गीय मानव का जीवन अपने मानसिक संघर्ष तथा बाह्य द्वन्द्व के साथ उभरकर आता है। इस प्रकार विष्णुजी का नाटक साहित्य मानवीय प्रकृति से सीधा जुड़ा हुआ साहित्य है। क्योंकि विष्णुजी के नाटकों में जीवन का यथार्थ चित्रण दिखाई देता है। आपके नाटक जीवन के परिप्रेक्ष्य से ही चुने गये हैं। विष्णुजी की विशेषता यह है कि आपने अपनी रचनाओं में एक परम्परा का सार्थक निर्वाह करने वाले लेखक के रूप में अपने को प्रस्तुत किया है। साथ ही जिन नवीन स्थितियों से समाज आक्रान्त है, उनका रचनात्मक स्तर पर विरोध करते हुए परिवर्तन की उन स्थितियों का स्वागत किया है जो व्यक्ति और समाज के स्वाभाविक विकास में सहज होकर आती है।

प्रतिबिंबित नारी-जीवन

श्री विष्णु प्रभाकरजी ने नारी जीवन को कई कोणों से परखा है। नारी समाज का एक अंग है, वह गृहलक्ष्मी ही नहीं, समाज विधात्री भी है। वह सन्तान उत्पन्न करने वाली जननी माता है। नारी का कार्यक्षेत्र बहुत विस्तृत है, वह समाज के भाग्य निर्माण में सहायक भी हो सकती हैं। आपने एक ओर अपने नाटकों में भारतीय नारीत्व का आदर्श उपस्थित किया है, तो दूसरी ओर नई परिस्थितियों में अपने पति से सम्बन्ध विच्छेद करने वाली नारी का चित्रण किया है। प्रभाकरजी के मन में नारी के प्रति सच्ची सहानुभूति है। इसलिए उनका मन उन नारी पात्रों की खोज करता है, जिन-जिन नारियों के प्रति अत्याचार हुआ है। ऐसी असहाय नारियों को अपनी लेखनी का लक्ष्य बनाकर उनके आँसुओं की एक-एक बूँद मोतियों के समान एकत्र करता है और उन आँसुओं की निधि को आज के पुरूष को भेंट करता है। इस निधि को पुरूष जब पाते हैं तो वे अपने इस अत्याचार की निशानी को तुरन्त पहचानते हैं। इन आसुओं की निधि में नारी के दमन और उत्पीड़न का इतिहास छिपा है। आधुनिक युग में यह प्रवृत्ति मुख्य है। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने शायद सर्वप्रथम उपेक्षित नारी पात्रों की ओर कवियों और लेखकों का ध्यान खींचा था। श्री विष्णु प्रभाकरजी ने इसी उपेक्षित नारी को अपने साहित्य का मुख्य लक्ष्य बनाया है।

विष्णुजी हमेशा से नारी स्वातंत्र्य और स्वावलम्बी नारी के समर्थक रहे हैं। आपका मानना है कि समाज की अनेक बुराईयों की जड़ में नारी की आर्थिक पराधीनता और उस पर लादे गये तरह-तरह के बन्धन हैं। इस समाज के पुरूष जाति ने नारी पर सदैव अत्याचार किये हैं। क्या स्त्री-जाति कष्ट सहने को ही बनी है और पुरूष जाति अत्याचार करने को ? क्या इन अबलाओं के भाग्य में निर्दयी पुरूषों के पल्ले पकड़कर रोना ही लिखा है ? नारी केवल पति और पुत्र तक ही अपना संसार समझती थी। पति की प्रत्येक सनक में पत्नी का साथ देना आवश्यक था। पत्नी के व्यक्तित्व का आदर करना पति को अच्छा नहीं लगता था। लेकिन नारी को पति के प्रति सर्वदा श्रध्दा रखनी ही पड़ती थी। इस प्रकार भारतीय समाज में नारी को सम्पत्ति और श्रम के अधिकार से वंचित रखा और नारी की स्वतंत्रता

का अपहरण कर लिया गया है। कवि धूमिल ने अपने काव्य में नारी समस्या का वर्णन करते हुए लिखा है -

"औरत आंचल है
जैसा कि लोग कहते हैं - स्नेह हैं,
किन्तु मुझे लगता है
इन तीनों से बढ़कर
औरत एक देह है।"

पुरूष नारी का स्वामी है, ईश्वर है, सारे आर्थिक और सामाजिक अधिकार उसके हाथ में हैं, वह कुछ भी कर सकता है। मध्यकाल में नारी को आर्थिक और सामाजिक अधिकारों से वंचित कर देने के कारण उसके व्यक्तित्व का -ह्रास हो चुका था। "आप सब पुरूष हैं···आप मुझे दुर्बल समझते हैं कि नारी की सहायता करने का पुरूष को अधिकार है और इसी आधार पर वह उसे अपनी बना सकता है - अपनी सम्पत्ति, अपनी चरणदासी, अपनी प्रेमिका, सम्पत्ति, दासी, प्रेमिका, पत्नी सब एक ही सिक्के के भिन्न-भिन्न नाम हैं। इन्हीं को कवि लोग प्राणेश्वरी, प्राणवल्लभा, चिरसंगिनी, चिर प्रियतमा और न जाने क्या क्या कहकर पुकारते हैं। नारी को और भी अपंग बनाने के लिए, दासता की जंजिरों को और भी जकड़ने के लिए।"[1]

आधुनिक युग में पाश्चात्य शिक्षा ने दृष्टिकोण बदल दिया। समाज में भी पुरूष और नारी परस्पर मेल-जोल अधिक बढ़ने से मध्यकालीन नियमों से जकड़े समाज में प्रेम-सम्बन्धों की सफलता सम्भव नहीं थी। क्योंकि कन्या को प्रेम करने का अधिकार नहीं था। माता-पिता ही उसके विवाह के लिए उत्तरदायी थे और कन्या के पिता बन्धु-बान्धव आदि प्रेम को नहीं, बल्कि अपनी जाति-व्यवहार और सामाजिक उत्कर्ष को अधिक महत्व देते थे। इसका सही चित्रण विष्णुजी ने अपने "युगे-युगे क्रान्ति" नाटक में किया है। कर्तव्य और अधिकार के बारे में देवीप्रसाद सूत्रधार से कहता है - "तुम नहीं जानते, मैं अपनी लड़की के विवाह को लेकर कितना परेशान हूँ। लेकिन मैं यह कभी नहीं स्वीकार कर सकता कि मेरी आज्ञा के बिना वह कुछ करे। आखिर मैं पिता हूँ। मेरे कुछ कर्तव्य हैं, अधिकार हैं। वे

कर्तव्य और अधिकार मुझे इसलिए तो प्राप्त हुए हैं कि मैं अधिक अनुभवी हूँ। हर बुजुर्ग अनुभवी होता है।"[2]

अपने अधिकारों में आर्थिक स्वतंत्रता के साथ प्रेम की स्वतंत्रता भी एक मुख्य माँग बनकर खड़ी हुई। लेकिन समाज ने इसका विरोध किया। विष्णुजी भी यह मानते हैं कि युगों से हमारे समाज ने नारी को तरह-तरह से प्रताड़ित किया है जिस कारण नारी का स्वतंत्र अस्तित्व कभी उभर नहीं पाता। नारी के स्वावलम्बी और स्वतंत्र होने पर ही एक स्वस्थ समाज का निर्माण हो सकता है और यह तभी संभव हो सकता है जब पुरूष का अंकुश उस पर से टुटे।

विष्णुजी ने अपने अनेक नाटकों में ऐसे विषयवस्तु को चुना है जहाँ नारी का एक व्यक्तित्व बन पाया है। आपने अपने नाटकों में यह संकेत दिया है कि नारी पुरूष की दासी नहीं, बल्कि सहधर्मिणी है। "समरेखा-विषमरेखा" नाटक की नायिका पत्नी रेखा का यह कथन भी इसी तथ्य की ओर संकेत करता है - "कैसे चली जाऊँ केशव। मैं विवाहिता हूँ। और विवाहिता क्या होती है, यह तुम्हें बताने की जरूरत नहीं है। लेकिन अगर तुम मुझे दासी बनाना चाहो, तो वह नहीं होगा, वह नहीं हो सकता।"[3]

इस प्रकार विष्णुजी के नाटकों में "डॉक्टर", "टगर", "बन्दिनी", "कुहासा और किरण", "युगे-युगे क्रान्ति", "टूटते परिवेश", "अब और नहीं", "श्वेत-कमल", "केरल का क्रान्तिकारी", "गान्धार की भिक्षुणी", "सत्ता के आर-पार", "नवप्रभात", "समाधि", "होरी" और "चन्द्रहार" आदि सभी नाटकों में नारी जीवन के कई पहलुओं का चित्रण किया गया है। जिसमें कई नारियों के जीवन में एक विशेष प्रकार का स्वाभिमान भरा हुआ है। भारतीय समाज में परम्पराओं के बोझ, झूठी मान-मर्यादा, अन्धविश्वास और कुरीतियाँ, पुरूष के दमनचक्र, परिवार और आस-पास के वातावरण तथा अपने अकेलेपन के जंजीर से जकड़ी हुई इन नाटकों के नारियों का जीवन अमानवीय तथा जानवरों की तरह है। इन नाटकों की नारियाँ एक स्वतंत्र और स्वालम्बी जीवन जीने की कोशिश में तड़पती है। संघर्ष करती हुई छटपटाती है, हारती-जीतती है। समाज के बनाये बन्धनों से बाहर आने की जी-तोड़ कोशिश करती रहती है।

इन सभी नाटकों के अध्ययन के बाद ऐसा लगता है कि नाटककार श्री विष्णु प्रभाकरजी के मन में नारी के प्रति आदर्श का भाव और श्रध्दा है। नाटककार नारी को बंधनमुक्त और स्वावलम्बी देखना चाहता है। किन्तु इसके साथ ही नारी के आदर्श रूप का जो परम्परागत रूप चला आ रहा है उसे भी नाटककार ने चित्रित किया है। "समस्या नाटककार रूढ़िवादी जीवन का एक ऐसा चित्र खींचता है जिसमें व्यक्ति परम्परागत आदर्शों के जाल में विवश उलझा हुआ अपना प्रकृत जीवन व्यतीत करने में असहायसा दिखलायी पड़ता है। उसे विवश होकर एक आडम्बर या ढोंग का जीवन बिताना पडता है। इसी स्थिति के प्रति समस्या नाटककार का विद्रोह प्रकट होता है। वह रूढ़िवादी अथवा अलौकिकता पर आदर्शों के प्रति अनास्था व्यक्त करता है।"[4]

1· <u>सुसंस्कृत और आदर्श नारी का जीवन</u>

भारतीय संस्कृति में नारी का इतिहास इस बात का साक्षी है कि हमारे देश की नारी ने अपने शौर्य, बलिदान और त्याग से ही संस्कृति का निर्माण किया। उसके माता, बहन, पत्नी और पुत्री आदि रूपों के कारण हमारे समाज में वह गृह-लक्ष्मी के रूप में सम्मानित रही। भारतीय गृहिणी नारी देश में किसी भी वर्ग अथवा जाति (से) हो उसके ये रूप सर्वश्रेष्ठ रहे हैं। हिन्दी नाट्यकारों को नारी के ये रूप किसी-न-किसी रूप से सदा से प्रेरक बने हुए हैं।

श्री विष्णु प्रभाकरजी ने अपने "टूटते परिवेश" नाटक में एक आदर्श गृहिणी के रूप में करूणा का चरित्र उभारा है। करूणा एक आदर्श भारतीय नारी है। वह एक मध्यमवर्गीय परिवार की गृहस्वामिनी है। परिवार की गृहस्वामिनी के नाते माँ सदा ही पूज्यनीय और सम्मानित होती है। लेकिन इस परिवार में करूणा का आदर नहीं रखा गया है। इस गृहस्वामिनी के मन पर जो अपने पुराने पीढ़ी के संस्कार हैं, तथा संयुक्त परिवार की रूपरेखा उसके सामने हैं, यहीं तो सुसंस्कृत नारी का आदर्श है। लेकिन करूणा और उसका पति विश्वजीत अपनी बेटी और बेटों के संस्कार देख रहे हैं। जो आज की सभ्यता में पले अपने-अपने स्वार्थों में और अपनी-अपनी दुनिया में मस्त हैं। गृहस्वामी विश्वजीत और करूणा अपने पुराने संस्कारों में बंधे, संयुक्त परिवार की आकांक्षा लिए जी रहे हैं। करूणा अपने

बेटे और बेटियों को अपने संस्कारों की सीख भी देती है। सबके लिए खाना बनाती है। घर में कोई भी दुःखी न हो जाय और अपना परिवार खुशी के साथ घुल-मिलकर रहे इसकी उसे ही चिन्ता है। वह अपने पति विश्वजीत के साथ पूजापाठ करती है। घर में बिखरे हुए सामानों को व्यवस्थित कर देती हैं। लेकिन उनके लड़कों को माँ या पिता का कोई अर्थ नहीं रह गया है। इन सबके कारण कुछ ही दिनों में सारा परिवार टूट-बिखर जाता है। करूणा अपने बेटे विवेक से कहती है - "सीलन, घुटन, बदबू, मुक्ति यही कहते-कहते सब चले गये। तू भी जा। तू भी मुक्ति पा। लेकिन....लेकिन मेरे भाग्य में मुक्ति नहीं लिखी है। मैं इस घर को छोड़कर कहीं नहीं जा सकती।"[5]

करूणा अभी बुढ़ी हो गयी है। खाना पकाते समय उसके हाथ काँपते हैं। परिवार का अलगाव विश्वजीत को पागल-सा कर देता है। परेशान होकर जब विश्वजीत खुदकुशी करने के लिए घर से निकल जाते हैं तो बेचारी करूणा घबराती है। तब सबको बुलाकर पिताजी की तलाश करने को कहती है, "आज सवेरे सवेरे वे चुपचाप घर से निकल गये और अब तक नहीं लौटे। रात होने को आई। {रूँधा स्वर} मैं अकेली क्या करूँ ? तुम उन्हें देखो न। खून-पसीना बहाकर पाला हैं तुम सबको....।"[6] लेकिन उसकी एक भी औलाद टस से मस नहीं होती। लेकिन जब विश्वजीत घर लौटते हैं तो करूणा खुशी से पागल हो जाती है। जब सब ललककर गले मिलते हैं, तो करूणा हाथ जोड़कर भगवान के प्रति कृतज्ञता प्रकट करती हैं। अब वह सबके लिए हलवा बनाना चाहती है और अपने हाथों सबको परोसकर खुशी से बाँटना चाहती है। यह एक आदर्श संस्कारशील भारतीय नारी का ही रूप है।

"श्वेत-कमल" नाटक में भी राखी गौण नारी पात्र है। राखी एक अफसर ही नहीं बल्कि कर्तव्यदक्ष, आदर्श, ममतामयी नारी है। उसका जन्म एक गरीब परिवार में हुआ था। उसके माता-पिता अक्सर बीमार रहा करते थे। जब वह कडी मेहनत के कारण अफसर बनती है। तो अपनी बहनों को पढ़ाकर उनकी शादी भी कर देती है। अपने शादी के समय उसे अपने बीमार माँ-बाप की चिन्ता खा जाती है। तभी वह होने वाले पति से बात करती है और फिर माँ-बाप भी उसके ही साथ रहने लगे। उसी प्रकार वह अपनी सहेली बिन्दू को भी हर समय साथ देती है। इस प्रकार राखी एक त्यागी नारी है।

2· नारी जीवन में विद्रोह और मुक्ति की तलाश

भारतीय समाज में नारी के शोषण का एक लम्बा इतिहास है। नारी के आँसुओं से लिखे इस इतिहास में शोषण के अनेक प्रकार हमें देखने को मिलते हैं। प्राचीन काल से लेकर आज तक अनेक बड़े-बड़े विचारकों ने नारी की प्रशंसा की है। लेकिन दूसरी ओर नारी को समाज ने अपने अधिकार से वंचित ही रखा है। क्योंकि नारी असमर्थ, शरीर से निर्बल और आभूषणों वस्त्र में उलझी रहने वाली होने के कारण समाज को उसकी स्वतंत्रता से विनाश नज़र आने लगा। नारी के लिए मध्ययुग में युध्द हो जाया करते थे, क्योंकि उसे एक सम्पत्ति, धन प्राप्त करने की वस्तु माना गया था और इस पद्धति के कारण समाज ने नारी पर बहुत कठोर बंधन लगाये थे। लेकिन आधुनिक काल में पश्चिमी शिक्षा के कारण नारी मुक्ति आन्दोलन आरम्भ हुआ। समाज के अत्याचार से नारी को मुक्ति दिलाने के लिए अनेक महान व्यक्तियों ने प्रयत्न किये। अज्ञेय ने लिखा है -

"दर्द सबको माँजता है
और जिन्हें माँजता है उन्हें वह यह सीख
देता है
कि सबको मुक्त रखे।"[7]

नाटककार विष्णु प्रभाकरजी नारी मुक्ति के समर्थक रहे हैं। आपके अनेक नाटकों में यह भावना हमें देखने मिलती है। विष्णुजी के अनुसार अनेक सुधार आन्दोलनों ने नारी की मुक्ति के लिए कम प्रयत्न नहीं किया। गांधीयुग के स्वतंत्रता-संग्राम ने उसे घर से बाहर की कर्मभूमि में लाकर खड़ा कर दिया था। इन सभी आन्दोलनों की सीमायें भी थी और वे स्वाभाविक थी, लेकिन धीरे-धीरे वे भी टूटती चली गई। श्री विष्णु प्रभाकरजी ने कहा है - "मैं नारी की पूर्ण मुक्ति का समर्थक हूँ। अंकुश यदि आवश्यक ही है, तो यह काम भी वह स्वयं ही करे। युग तेजी से बदल रहा है और मैं भी सदा "नये" के प्रति आग्रहशील नहीं तो उन्मुख अवश्य रहना चाहता हूँ। मैं नारी के शारीरिक संपर्क को स्थिति के अनुसार ही मानता हूँ। किसी "वर्जनशीलता" या अनिवार्य छूट दोनों को नहीं मानता।"[8]

श्री विष्णु प्रभाकरजी ने अपने "युगे-युगे क्रान्ति" और "अब और नहीं" इन नाटकों में नारी जीवन में उभरी हुई विद्रोह की भावना और नारी मुक्ति की तलाश आदि का चित्रण किया है। आज स्त्री और पुरूष दोनों स्वतंत्र व्यक्तित्व के नाते जीना चाहते हैं। आज की नारी अपने व्यक्तित्व की खोज में प्रयत्नशील है। लेकिन इस प्रयत्न में उसे हर प्रकार से विरोध का सामना करना पडता है। भले ही वह परम्परागत रूढ़ियों से मुक्त हो गई है, लेकिन आधुनिक समस्याओं के चक्कर में फँसती जा रही है। अभी तक वह गृहस्थी के पिंजडे को तोड नहीं सकी और उन्मत्त पुरूष आज भी स्त्री को अपने अनुसार ही चलाना चाहता है। लेकिन आज की समकालीन चिन्तन की संवेदना नारी को विद्रोह के लिए प्रेरित कर रही है। इसका सही चित्रण विष्णुजी ने "अब और नहीं" नाटक की नायिका शान्ता के माध्यम से किया है। यह नाटक एक मध्यमवर्गीय स्त्री के टूटे मन की कहानी को दोहराता है। नाटककार विष्णुजी के मतानुसार यह किसी नारी विशेष या पुरूष विशेष की कहानी नहीं है बल्कि भारतीय समाज की सभ्यता की ही कहानी है।

इस नाटक की नायिका शान्ता का विवाह वीरेन्द्र प्रताप से होता है। वह अपने पति से बहुत प्यार करती है। लेकिन उसके पति सामन्ती विचार के थे और उसने शान्ता को मानो कठपुतली ही बना दिया था। शान्ता एक सितार बजाने वाली और चित्र बनाने वाली अच्छी कलाकार थी। लेकिन उसकी सास और पति को यह बिलकुल पसन्द नहीं था। पिंजड़े में बन्द पशु की तरह शान्ता की अवस्था हो गयी थी। वह एक मानसिक रोगिणी बन गई थी। जब डा॰मलिक उसके इलाज के लिए आते हैं तो वह शान्ता को किसी बेटे के साथ कनाडा घुमने को जाने के लिए कहते हैं। तब शान्ता की दमित भावना एकदम बाहर आती है और वह कहती है - "लेकिन यह तो एक बन्धन से दूसरे बन्धन में जाना होगा। मैं चाहती हूँ मुक्ति। दिला सकेंगे वह आप ? दवा नहीं मुक्ति। नहीं, आप नहीं दिला सकेंगे। अपना मार्ग मुझे आपही खोजना होगा।"[9]

शान्ता इस गृहस्थी के बन्धन से मुक्त होना चाहती थी। पति के मीठे बोल झूठे जाल में रहना उसे पसन्द नहीं था। लेकिन वह एक भारतीय नारी होने के कारण अपने अरमानों का गला घोंट देती थी। वह डॉ॰मलिक से कहती है -

"प्रेम का अर्थ क्या एकाधिकार होता है। तन की भूख ही क्या सब कुछ होती है। मन की भूख नहीं होती कुछ ?"[10]

आज तक शान्ता ने वही किया जो उसके पति चाहते थे शान्ता का सारा जीवन पति की इच्छा-अनिच्छा, विश्वास-अविश्वास से घिरा हुआ था। वीरेन्द्र प्रताप ने शान्ता को अपनी इच्छा की दासी बनाया था। इसी कारण वह पति को अधिनायक मानती थी। क्योंकि वीरेन्द्र प्रताप ने कभी भी शान्ता के मन की भूख जानने की कोशिश ही नहीं की थी। इस कारण शान्ता के मन की कुण्ठित भावना ने उसे विद्रोही बनाने के लिए प्रेरित किया। शान्ता बेडियों को तोड़कर कैद खाने से बाहर मुक्त हवा में आना चाहती है। इस मुक्ति की तलाश में घर से निकलती है। शान्ता बन्धन के इस अन्धकार को चीरकर बहुत दूर जाना चाहती है। लेकिन जाते वक्त अपनी बेटी शुभ्रा को अन्याय का विरोध करना सिखाती है और कहती है तुम अपना पथ स्वयं ही ढूँढ लेना। नाटक के अन्त में शान्ता हँसती हुई कहती है - "बन्धन तो मृत्यु है, जीवन नहीं। लेकिन हम हैं कि मृत्यु को ही जीवन मानकर जीते रहते हैं। मैं बन्धन मुक्त होकर जीना चाहती हूँ। इसलिए -

"आओ अपना दीपक आप बनें हम,
खोजे अपने पथ को अपने आप
चलने को निर्द्वन्द और निर्भय, निष्काम।"[11]

इस तरह विष्णुजी ने इस नाटक में नारी जीवन में मुक्ति की भावना का दमन और उससे प्रेरित विद्रोही भावना का चित्रण किया है।

विष्णु प्रभाकरजी ने "युगे-युगे क्रान्ति" नाटक में निरन्तर चलने वाले पाँच पीढ़ियों के मूल्यों के संघर्ष के माध्यम से सामाजिक क्रान्ति की निरन्तर प्रक्रिया को स्पष्ट किया है। प्रत्येक पीढ़ी में प्रचलित समाज व्यवस्था, नियम और उपनियमों के विरूध्द नयी पीढी का विद्रोह दिखाया है। जब एक युवक अपनी पीढ़ी के विरूध्द विद्रोह करता है, तो उसके इस विद्रोह का अनुभव अगले पीढ़ी के लिए पुराना हो जाता है।

कल्याणसिंह अपनी पत्नी रामकली का मुँह दिन के प्रकाश में देखने का साहस करके पुराने जमाने की यह परम्परा तोड़ देता है। तो कल्याणसिंह का पुत्र प्यारेलाल लाला सगुनचंद की विधवा बेटी कलावती से विवाह करके पुनर्विवाह पध्दति को अपनाता है। प्यारेलाल आर्य समाज के सिध्दान्तों से प्रभावित हैं।

शारदा क्रान्तिकारी पिता प्यारेलाल की पुत्री है। उसने बड़े साहस के साथ विधर्मी विमल से शादी की है। वह म०गांधीजी के आन्दोलन से प्रभावित है। इसी कारण उसने अपना सारा जीवन गांधीजी के आदेशानुसार देश को अर्पित कर दिया। घर की चार दीवारी से निकलकर वह समाज में खुले मूँह ही नहीं घुमती, बल्कि उसके सिर का पल्ला भी खिसककर कंधे पर आ गया है। शारदा केवल पुरूषों की तरह भाषण ही नहीं देती, बल्कि उसके मूँह से आग उगलती है। नारी पुरूष से किसी भी बात में पीछे नहीं है। पुरूष के कंधे से कंधा लगाकर आज़ादी के असहयोग आंदोलन में भाग लेने की बात करती है। शारदा अपनी प्यारी बहनों से आवाहन करती हुई कहती है - "हम भी पुरूषों के साथ पिकेटिंग करेंगी। विदेशी कपड़ो की होली जलाएँगी।"

शारदा को एक दिन उसके सुधारक पिता प्यारेलाल ने भरे बाजार में उसके गाल पर इसलिए थप्पड मारा था कि उसकी साड़ी का पल्ला उसके सिर से उतर गया था। उसी दिन शारदा ने निश्चय किया कि अब इन पुराने दकियानुसी रीतिरिवाजों को नहीं मानेगी। किसी भी हालत में इसके विरूद्ध मैं विद्रोह करूँगी ही। विमल जब इसी दकियानुसी समाज के भय के कारण शारदा को शादी की बात बताता है तो शारदा कहती है - "मैं अपने पिताजी को जानती हूँ वे बड़े कट्टर हैं। अपने दायरे से बाहर नहीं निकल सकते। इसलिए वे निश्चय ही मना कर देंगे। लेकिन मैं उनकी चिन्ता नहीं करती। मैं अपने पथ से पीछे नहीं हटूँगी। मैं बालिग हूँ। अपना भविष्य बनाने का मुझे अधिकार है।"[12]

नाटककार विष्णु प्रभाकरजी ने प्रस्तुत नाटक में शारदा ने अपने जीवन में रूढ़ीवादी समाज से किया हुआ विद्रोह और दकियानुसी समाज की बेड़ियों को तोड़कर की हुई मुक्ति की तलाश का चित्रण किया है।

"टूटते परिवेश" नाटक में भी विष्णुजी ने विद्रोही नारी के रूप में मनीषा के व्यक्तित्व को उतारा है। मनीषा 25-26 साल की एक जवान और सुन्दर नारी है। वह करूणा और विश्वजीत की दो नम्बर की बेटी है। वह आधुनिका, फैशनेबल लड़की है। वह कॉलेज की प्रोफेसर है और उसी कॉलेज के क्रिस्टोफर नाम के प्रोफेसर से प्यार करती है। जब उसकी माँ करूणा को इस बात का पता चलता है तो वह मनीषा को समझाने की कोशिश करती है। लेकिन मनीषा फिर भी उससे ही शादी करना चाहती है। अपने खानदान के रीतिरिवाज और परम्परा के सारे बन्धनों को तोड़कर क्रिस्टोफर से ही शादी रचाती है। अपने कुलीन परम्परा के विरोध में उसने विद्रोह किया है। वह दर्शक की ओर देखकर बोल उठती है, "मैं पूछती हूँ कि क्या मैं आपको इतनी नादान दिखाई देती हूँ कि अपना भला-बुरा न सोच सकूँ, अपनी इच्छा से कहीं आ-जा न सकूँ, जो ठीक समझूँ वह कर न सकूँ ? यानी अपने भाग्य का निर्णय अपने आप न कर सकूँ। जी नहीं, मैं अपना मार्ग आपको चुनने का अधिकार नहीं दे सकती, कभी नहीं दे सकती। मैं जा रही हूँ, वहीं जहाँ मैं चाहती हूँ। आप चाहे तो इसे पाप कह सकते हैं, विद्रोह भी कह सकते हैं। भाषा का दुरूपयोग करने से कौन किसको रोक सका है। लेकिन मैं तो इसे अधिकार कहती हूँ, अपने भाग्य का अपने आप निर्णय करने का अधिकार। मैं इस अधिकार के लिए ही यह घर छोड़कर जा रही हूँ।"[13]

"गान्धार की भिक्षुणी" नाटक की नारी भारती ममतामयी, विद्रोही नारी के रूप हमारे सामने आती है। यशोधर्मन के कहने पर भारती तक्षशिला की भिक्षुणी से बच्चे गौरव को लेकर आनन्दी के पास आती है। गौरव को पाकर आनन्दी खुशी से पागल हो जाती है। भारती तो हूण जाति की लड़की है, फिर भी उसे अपने भारतीय संस्कृति से प्यार है। अपने देश की संस्कृति की रक्षा के लिए विद्रोही बनती है। मालव वासियों पर किये हुणों के अत्याचार से उसके मन में घृणा पैदा होती है। वह अपने पति कवि वस्तुमित्र के रंग में रंग मिलाकर और मालती के सूर में सूर मिलाकर देशभक्ति एवं देशप्रेम के गीत गाती है। "गान्धार की भिक्षुणी" आनन्दी को वह माँ कहकर पुकारती है। उसके मृत शरीर से लिपटकर आलाप-विलाप करते हुए कहती है -

"मैं निराशा की निशानी छोड़ आयी हूँ
सुखद आशा का सुनहला प्रातः लायी हूँ।
सुन हँसी मेरी व्यथा का सिन्धु शरमाया
आज जीवन में नवल आल्हाद फिर आया"[14]

भारती एक क्रान्तिकारी, विद्रोहिणी नारी थी। इसलिए यशोधर्मन आनन्दी जैसी विजयी देवी के देह की पवित्रता के लिए आँसू नहीं देखना चाहता था। भारती एक क्षण देवी आनन्दी के पार्थिव शरीर को देखती है, फिर चरण पर सिर रख देती है और कह उठती है - "मेरी जन्म-जन्म की गुरू, मेरी माँ। मैं अब कैसे जिन्दा रहूँगी ?"[15] आनन्दी देवी ने अपनी मातृभूमि के लिए प्राणों की बलि दे दी। लेकिन भारती के गुरू जाने से वह विरह के सागर में डूब गयी।

3· <u>अंधविश्वासों में बसा नारी-जीवन</u>

नाटककार विष्णु प्रभाकरजी ने भारतीय समाज में नारी का जीवन अभी भी किसी न किसी प्रकार के अन्धविश्वास से ग्रस्त है। इसका सही चित्रण अपने बन्दिनी नाटक में किया है। नये सुधार आन्दोलनों और आधुनिकता बोध ने जनसाधारण की मानसिक को एक सीमा तक बदल दिया है। परन्तु भारतीय संस्कृति में नारी का जीवन आज भी कहीं न कहीं अन्धविश्वासों से घिरा हुआ है। "बन्दिनी" नाटक की कथा अन्धविश्वास पर गहरे चोट करती हैं। प्रस्तुत नाटक में परम्परा और रूढ़िवादी मानसिकता को उभारने की सफल कोशिश की गई है। अब शिक्षित वर्ग इन्हें स्वीकार नहीं करता, लेकिन कस्बों और गाँवों में आज भी देवी अवतरित होती है। "मानव तो आज दुविधाग्रस्त समाज में फैले तनाव से मुक्ति चाहता है। तनाव कब पैदा होता है जब कोई मनुष्य जो कुछ वास्तव में हो रहा है और जिसको वह सामान्य मान सकता है, अर्थात परम्परा से चले आये मूल्यों और अब हो रहे परिवर्तनों में अन्तर देखता है तो सामाजिक अनुकूलन प्रणाली उसे प्रेरित करती है कि वह स्थिति को बदलने का प्रयत्न करे।"[16] विष्णुजी का प्रस्तुत नाटक अंधविश्वास की समस्या पर आधारित है।

इस नाटक की मूल कथा का आधार अन्धविश्वास ही है। हमें इस विज्ञान युग में भी नारी के जीवन में अज्ञान रूपी अंधकार फैला हुआ दिखाई देता है।

इस अज्ञान का सजग रूप नारी जीवन में अंधविश्वास के रूप में पनप रहा है। अन्धविश्वास अज्ञान पर ही पलता है और इस अज्ञान का शिकार कालीनाथ हो गया था, जो अपने स्वप्न के कारण अपनी छोटी बहु उमा को देवी की साक्षात मूर्ति समझता था। अब तो कालीनाथ ने उमा के चारों ओर अन्धविश्वास का चक्रव्युह बना लिया है। उमा अन्धविश्वास के मायाजाल में फँस गई है। इसी कारण उमा की सम्पूर्ण चेतना को अन्धविश्वास ने ग्रस लिया है1 अब वह अन्धविश्वास की क्रूर कारागृह में बंदिनी बन गई है। उमा सावित्री से कहती है, "पर जीजी। आज मुझे लगता है जैसे एक दिन मैं इन लहरों में समा जाऊँगी। मेरे कारण मेरा अनु पिटता है। वे मुझसे हमेशा-हमेशा के लिए बिछुड़ गए हैं, जीजी मैं तुम्हारे पैरों पडती हूँ मुझे बचा लो, मुझे यहाँ से निकलाने का कोई न कोई प्रबन्ध करो"[17] लेकिन कालीनाथ बड़ी भयंकर व्यूह रचना करता है। "मनुष्य चिरकाल तक धर्माडम्बर का शिकार रहा है और धर्म ने उसे सदा अंधेरे में ही रखा है।"[18] उमा का पति सुरेन्द्र अपने पिताजी के बनाए हुए इस चक्रव्यूह को तोड़ना चाहता है। क्योंकि उमा उसका प्यार है, जीवन है और वह उमा के जीवन से बेहद प्यार करता है, उसे किसी भी कीमत पर खोना नहीं चाहता। लेकिन धीरे-धीरे उमा भी इस अन्धकार में डूब जाती है। वह अपने को चिरसंगिनी महाकाली का रूप मानती है। संसार का कल्याण करने वाली शिवशंकर की पत्नी समझती है। तभी सुरेन्द्र चीखकर कहता है, "तुम उमा नहीं हो। तुम देवी भी नहीं हो। तुम बन्दिनी हो। काश। मैं तुम्हें अन्धविश्वास की इस क्रूर कारा से मुक्त कर पाता। पर···लगता है मैं ऐसा नहीं कर पाऊँगा। मन्दिर की दीवारें दो-चार दिन में पूरी हो जाएँगी और तुन सचमुच पाषाणी बन जाओगी। पर एक बात कह जाता हूँ, तुम किसीका कल्याण नहीं कर सकोगी, क्योंकि तुम्हारे अन्दर का प्रेम मर गया है। अब तुम्हें इस कारा से मुक्त कराना असम्भव है। मैंने तुम्हें खो दिया, सदा-सदा के लिए खो दिया। हे भगवान, यह वही उमा है, मेरी उमा मेरी शैतान चिड़िया।"[19]

बेचारी बदनसीब उमा को जबरदस्ती से पूजा के स्थल पर बिठाया गया था। अब उसकी पूजा होती है। गाँव के सारे लोग भी उसे काली माता मानते हैं। उमा की सहेली पुँटी अपने बीमार बच्चे को लेकर उमा देवी के पास आती

है और पुँटी अपना दामन फैलाकर करूणामयी काली को अपने बच्चे को बचाने कहती है और जब उसका बच्चा ठीक हो जाता है तो देवी माता का चमत्कार समझकर उसका जयजयकार करती है।

विश्वेश्वरी एक अन्धविश्वासी अधेड़ उम्र की नारी है। उसकी बेटी माँ बननेवाली है। वह तीन दिन से छटपटा रही है। इसलिए विश्वेश्वरी कालीनाथ से काली माता का चरणामृत ले जाकर बेटी को पिलाती है। जब उसकी बेटी एक सुन्दर शिशु को जन्म देती है तो विश्वेश्वरी देवी माता का आशीर्वाद समझकर उमा के चरणों पर सिर रख देती है। अब सभी लोग उमा को देवी माता का रूप मानते हैं। उमा को पूजा स्थल पर दबाव से देवता बनकर बैठना पडता है। शिकारी के जाल में फसे हुए परिन्दे के समान उमा की अवस्था होती है और उसका असर यह होता है कि उमा भी अन्धविश्वासी बन जाती है। जब एक दिन उसके ही परिवार का बच्चा अनु बीमार होता है तो कालीनाथ अनु को बिना वैद्य के उमा के गोद में सुलाता है। लेकिन उमा उस बच्चे को बचा नहीं सकती। तब सभी लोग उसे गालियाँ देकर, डायन कहकर बदनाम करते हैं। उमा अपने को अनु की हत्यारन मानकर नदी में कूद कर जान देती है और खुदकुशी करने के बाद ही वह अन्धविश्वास के बंदीगृह से मुक्त हो जाती है।

विष्णुजी ने अपने "बन्दिनी" नाटक में अन्धविश्वासों में ग्रस्त नारी जीवन का सफल चित्रण किया है।

4· <u>आधुनिक स्वच्छन्द नारी का जीवन</u>

आधुनिक समाज की नारियों ने आज पाश्चात्य जीवन पध्दति को अपनाया है। भारतीय संस्कृति के रूढ़िवादी नैतिकता के बन्धन ढीले पड़ गये हैं। आधुनिक शिक्षित नारी अपने गृहिणी जीवन को ठुकराकर पुरूष की भाँति अपनी आज़ादी चाहती है। इसी कारण वह आज अपने परिवार की देखभाल भी ठीक प्रकार से नहीं कर पाती। आज वह एक आदर्श गृहिणी नहीं है। पाश्चात्य प्रभाव के कारण वह अपना संसार केवल गृहमंदिर ही नहीं मानती। नारी ने स्वयं सामाजिक रूढ़ियों से मुक्ति पाने के लिए जो संघर्ष किया है उसका चित्रण नाटककार विष्णु प्रभाकरजी

ने अपनी नाट्यकृतियों में समस्यानुकूल किया है।

नाटककार विष्णुजी के मतानुसार समाज में कोई मूल्य स्थिर नहीं होता और समाज अपनी गति से चलता है उसे चलने से कोई रोक नहीं सकता। भारतीय स्त्रियाँ पाश्चात्य जीवन को अपनाने में अपना गौरव समझती हैं। इस स्वच्छंदी जीवन के नाम पर नारी को आज फैशनपरस्ती और बाह्याडम्बर ने दीवाना बना दिया है आज वह आधुनिक बोध से प्रेरित होने के कारण पारम्पारिक पतिव्रता पत्नी बोध से भी मुक्त होना चाहती है। इस प्रकार परिवर्तनीय समस्या से नाटककार विष्णुजी ने अपने नाटकों के माध्यम से जूझने का प्रयास किया है।

"टगर" नाटक की नायिका रश्मि स्वच्छंद नारी टगर बन जाती है। शेखर नाम के एक प्रसिध्द लेखक रश्मि को आधुनिका न होने के कारण तलाक देते हैं। इसी कारण पुरुषों के लिए उसके दिल में नफरत पैदा हो गई है। वह सुन्दर लिबास पहनकर फॅशन-परस्ती, आधुनिका नारी बन जाती है। आधुनिका बनकर पुरुष जाति से वह बदला लेना चाहती है। अब हर पुरुष को टगर की वेशभूषा से अत्यन्त मोहक आकर्षण पैदा हो जाता है। टगर कहती है, "हर आदमी शिकारी बनना चाहता है। पर वह यह नहीं जानता कि उसी क्षण से वह स्वयं शिकार बन जाता है।"[20]

स्वतंत्रता के नाम पर चलने वाली टगर आदर्शवादी नारी का फर्ज भूलकर स्वच्छंदी बन गई है। वह अपने साज-शृंगार के कारण एक-एक पुरुष को अपने जाल में फँसाती है और उसे अपने लिए तड़प कर बरबाद कर देती है। उनके घर का सुख चैन नष्ट कर देती है। डॉक्टर टगर के बारे में कहते हैं - "लेकिन नारी का जो आदर्श है, पत्नी की जो कल्पना हमारे समाज में प्रचलित है, टगर उससे बहुत दूर है। वह स्वच्छन्द नारी है। वह तीन-तीन व्यक्तियों के साथ रह चुकी है।"[21]

अन्त में टगर इस खेल से मुक्ति चाहती है। वह अपने ही बिछाये जाल में फँस गयी है। अब किसी और की होने की आशा टगर में नहीं है।

नाटककार विष्णु प्रभाकरजी ने "टूटते परिवेश" नाटक की दीप्ति को भी स्वच्छन्द अधुनिका लडकी के रूप में चित्रित किया है। पश्चिमी सभ्यता के रंग में रंगी हुई दीप्ति सिध्दान्त, परिश्रम, आत्मा, ज्ञान, नैतिकता, मानवीयता, पूजा

आदि बातों पर विश्वास नहीं रखती। वह पुरानी परम्परा को तोड़ फेंकना चाहती है। अपनी मनमानी करके अपनी दुनिया में मस्त रहना चाहती है। वह कम्प्यूटर की जगत् में घूम रही है। विष्णु प्रभाकरजी ने इस नाटक के माध्यम से उसका चित्रण किया है जो आधुनिकता के नाम पर विडम्बनात्मक परिस्थितियाँ सामने आती हैं। इसके साथ ही नाटककार ने दो पीढ़ियों में चल रही मान्यताओं और मूल्यों का संघर्ष भी दिखाया है। दीप्ति आधुनिका होने के कारण अपनी मर्जी से विवाह करना चाहती है। क्योंकि वह विवाह को केवल एक सामाजिक आवश्यकता ही मानती है। अपने मन और नये विचारों की प्रेरणा से अपने जीवन की दिशा को बदलना चाहती है। दीप्ति अपनी माता करूण से कहती है, "मैं बन्धनों को तोड़ देना चाहती हूँ। पर जिन्दगी को नहीं, जिन्दगी से मुझे प्यार है। मैंने परसो एक नाटक देखा था। उसीके एक पात्र के शब्द याद रह गये हैं मुझे। वही तो याद रहता है जो आवश्यक होता है। वे शब्द थे - "अपनी जिन्दगी तबाह हो गयी तो क्या दूसरा दे देगा ? जिन्दगी किसी के लिए नहीं होती। वह सिर्फ अपने लिए होती है, होनी चाहिए।"[22] विष्णुजी के मतानुसार भारतीय नारी तो प्रेम की मूर्ति है। लेकिन आधुनिक शिक्षा से अपने कर्तव्यों को भूलकर रूप का प्रदर्शन करने वाली, फॅशन परस्त लोगों को मुग्ध करने वाली परियाँ न बने। बल्कि अपने स्नेह और सेवा से पुरूष का मन जीतने वाली गृहदेवी बने।

"युगे-युगे क्रान्ति" नाटक की रीता भी एक लापरवाह, फॅशन परस्त आधुनिका लडकी है। वह स्त्री के विवाह को गुलामी मानती हैं। कभी भी किसी प्रकार के बन्धन में न रहकर स्वतंत्र जीवन व्यतीत करना पसन्द करती है। पति-पत्नी जैसे रिश्ते-नाते उसे बिल्कुल पसन्द नहीं है। जब चाहे उससे अलग हो जाना ही पसन्द करती है। वह जैनेट से कहती है, "आपको भविष्य की बड़ी चिन्ता है। लेकिन हमें नहीं है। हम स्वयं उसके निर्माता हैं। हम नहीं चाहेंगे तो सन्तान कैसे होगी ? और जब चाहेंगे तो उसके वर्तमान पर अपने अतीत को नहीं लादेंगे।"[23] रीता अनिरूद्ध के साथ बिना शादी के जब तक चाहे रहना चाहती है। वह अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व के नाते जीना चाहती है। वह पति और प्रेमी दोनों में भेद नहीं मानती। इस नारी पात्र के माध्यम से आज की स्वच्छन्दी आधुनिका नारियों पर

कड़ा व्यंग्य किया है। जो प्रियतम-प्रेयसी वाली रंगीन दुनिया के स्वप्नों में जीना चाहती है।

"जिस किसी समाज में किसी विशेष विचारधारा, मान्यता और परम्परा के प्रति जैसी संवेदना होगी उसी के अनुसार उसे व्यक्ति और समाज पर आरोपित किया जाएगा।"[24] नाटककार विष्णु प्रभाकरजी ने अपने नाटक साहित्य से नये चिन्तन और नये जीवनमूल्यों की प्रेरणा देने के साथ ही भारतीय संस्कृति की रक्षा करने का प्रयत्न किया है। जो नई पीढ़ी को सीख देकर जीवन की मंजिल तक पहुँचता है।

5· कुण्ठित और अभावग्रस्त जीवन

नाटककार विष्णु प्रभाकर एवं उनके नाटकों में जिस रूप में नारी और पुरूष के सम्बन्धों का चित्रण हुआ है, उससे हमें यह पता चलताहै कि उस समय के समाज में परम्परागत रूढ मान्यताओं ने अपने लिए सुदृढ स्थान बना लिया था और इन मान्यताओं के कारण नारी के जीवन में किसी न किसी प्रकार अभाव देखने को मिलता है। समाज में पुरूष की अपेक्षा नारी ही परम्परागत रूढ़ मान्यताओं का शिकार हुआ करती थी। अपने पास की वस्तु से तथा प्राप्त वस्तु से मनुष्य को सन्तोष नहीं होता जो उसके पास नहीं है, उसे प्राप्त करने के लिए मनुष्य क्रियाशील बनता है। क्योंकि वह अपने अभावग्रस्त जीवन से खुश नहीं है। इच्छित वस्तु को प्राप्त करने की कामना उसके अन्तःकरण में द्वन्द उत्पन्न करने लगती है। क्योंकि इच्छित वस्तु उसे सरलता से प्राप्त नहीं होती। प्रभाकरजी ने नारी जीवन में होने वाले इस अभावग्रस्त भावना का चित्रण अपने नाटकों के माध्यम से किया है। नारी जीवन में यह संघर्ष केवल आन्तरिक होता है। कभी-कभी वही संघर्षशील नारी का जीवन अपनी कमजोरी के कारण कुण्ठाग्रस्त बन जाता है। यह सब परिस्थितियों पर अवलम्बित होता है।

भारतीय समाज में पुरूष के सान्निध्य में नारी आत्मरक्षा के लिए ही आयी हुई है। समाज ने उसे पुरूष की बराबरी करने का अधिकार नहीं दिया और बराबरी की भूमिका से व्यवहार करने की उसे आज़ादी भी नहीं है। सदियों से

उसका जीवन पुरूष पर निर्भर और पुरूष सापेक्ष ही रहा है। लेकिन समाज में केवल स्त्री की सुरक्षा से ही उसका जीवन सफल नहीं होता। उसे पुरूषों के बराबर का स्थान नहीं मिलता बल्कि पुरूष नारी को हमेशा अपने इशारों पर नचाता है। लेकिन कब तक नारी यह सहन कर सकती है ? एक न एक दिन उन दोनों के जीवन में टकराहट हो जाती है। कुछ पुरूष परम्परागत रूढ़ियों में बँधे होते हैं, कुछ पुरूष शंकालु वृत्ति के होते हैं, तो कुछ पुरूषों पर आधुनिक विचारों का प्रभाव होता है। इन्हीं विचारों के कारण पुरूष जब नारी को अपनी इच्छा की कठपुतली बनाता हैं तो नारी इसे अपना अपमान समझती हैं। पुरूष अपने विचार नारी पर लादकर उसे अपनी अहं भावना का सबूत देता है। जब नारी के मन को इससे ठेंस पहुँचती हैं तो वह इन विचारों को अपनी संघर्ष भावना में बदल देती है।

"युगे-युगे क्रान्ति" नाटक में विष्णुजी ने सन 1857 के जमाने का चित्र खींचा है। उस जमाने की रस्म-रिवाज के अनुसार पति-पत्नी पर गहरा दबाव था उस दबाव के कारण पति-पत्नी इक-दुजे से दिन में नहीं मिल पाते थे। रामकली ऐसे जमाने के कड़े बन्धनों में जीने वाली दबावग्रस्त नारी है। उसे अपने पति कल्याणसिंह से न मिलने के कारण घुटन-सी महसूस होती है। वह अपने पति से मिलने के लिए पिंजड़े में बन्द परिन्दे की तरह तड़पती और मचलती है। रामकली का मन इस दबाव के कारण ऊब जाता है। फिर एक दिन वह अपने पति को दिन में मिलने की तरकीब बताती है और अन्त में पुराने-जमाने की परम्परा को तोड़कर कल्याणसिंह रामकली का मुँह दिन के प्रकाश में देखने का साहस करता है। इस तरह रामकली का चरित्र एक कुण्ठाग्रस्त और दबावग्रस्त नारी का चरित्र है। विष्णु प्रभाकरजी ने इस नाटक के द्वारा जीवन की विविधता को उसकी गहराई के साथ चित्रित करने का प्रयास किया है।

"श्वेतकमल" नाटक में नीलिमा एक अभावग्रस्त एवं कुण्ठाग्रस्त नारी पात्र हैं। नीलिमा का परिवार आर्थिक अभाव के कारण अत्यन्त कठिनाईयों में जी रहा है। इस परिवार को न ही ठीक से खाने को रोटी मिलती है और न ही पहनने को कपड़ा। बड़ी लडकी बिन्दु दफ्तर में काम करके कुछ कमाती है तो परिवार का गुजारा हो जाता है। लेकिन बिन्दु को भी जब काम नहीं मिलता तो परिवार

की हालत देखकर नीलिमा परेशान होती है। नीलिमा अपनी सहेली पूनम से प्रभावित है, जो एक फॅशनपरस्त लडकी है। नीलिमा को भी लगता है कि मैं भी ऊँचा लिबास पहनकर फॅशनपरस्त आधुनिका लडकी बनकर घूमने को निकलूँ लेकिन वह अपनी गरीबी की हालत से न अच्छे कपड़े पहन सकती है और न ही घूम-फिर सकती है। उसे हमेशा अपने परिवार की चिन्ता खायी जा रही है। परिवार की परिस्थिति के कारण नीलिमा का कोई भी सपना पूरा नहीं हो सकता है। इस प्रकार नीलिमा जब कॉलेज में दूसरी लड़कियों की तरफ देखती है तो कुण्ठाग्रस्त बन जाती है। परिवार की आर्थिक समस्या के कारण वह अपने अभावग्रस्त जीवन जूझ रही है।

"अब और नहीं" नाटक की नायिका शान्ता भी एक ऐसी नारी हैं जो अपने पति के दबाव के कारण अपने अरमानों का गला घोंट देती है। शान्ता एक अच्छी कलाकार है। उसे सितार बजाने का और पेंटिग्ज का शौक है। लेकिन पति और सॉस के दबाव के कारण वह अपना शौक पूरा नहीं कर सकती थी। शान्ता कुण्ठाग्रस्त बन जाती है। शान्ता का पति उसकी भावनाओं की कदर ही नहीं करता था। बल्कि अपने ही विचार उस पर लादना चाहता था। उसे कठपुतली बनाकर अपनी उँगली पर नचाता था। शान्ता पर पति का इतना गहरा दबाव है कि वह हमेशा पति के हाँ में हाँ मिलाती है। शान्ता किसी दबाव में नहीं रहना चाहती। वह अपने पति के बन्धनों को ठुकराकर अपनी मर्जी से जीना चाहती है। शान्ता डा॰मलिक से कहती है - "उनके साथ मेरी रूचि मेल नहीं खाती। उनके मन के अनुसार मैं नहीं चलती तो इसका अर्थ यह तो नहीं है कि मेरा मन अस्वस्थ है। असल बात तो यह है कि मैं चौंतीस वर्ष तक बीमार रही। मन का दर्द मन में दबा रहा, इतना कि पता नहीं रहा मन क्या है, दर्द क्या है। अब पता लग गया और मैं ठीक हुई तो ये कहते हैं मैं बीमार हूँ। यह सब करे बिना मैं नहीं कह सकती अन्दर से मुझे कोई बाध्य करता है। ताकीद करता है। मैं उनकी गृहस्थी में अब और नहीं रह सकती। मुझे छुट्टी दिला दो। चौंतीस वर्ष उनके लिए थे। उनकी इच्छा के अनुसार जी। अब मुझे अपनी इच्छा के अनुसार जीने दो।"[25]

अन्त में शान्ता अपने अभावग्रस्त और कुण्ठाग्रस्त जीवन से छुटकारा पाने के लिए आत्महत्या का मार्ग ढूँढ लेती है।

इस प्रकार नाटककार श्री विष्णु प्रभाकरजी ने नारी जीवन की भावनाओं को चित्रित किया है। आपने यह बताने का प्रयास किया है कि आज के समाज में नारी पुरातन संस्कारों को तोड़ देती है। आज भारत की प्रत्येक नारी बदल रही है। वह पुरूष की सम्पत्ति या संगिनी बनकर अपने जीवन को अभावग्रस्त नहीं बनाना चाहती। पुरूष की इच्छाओं के सम्मुख नतमस्तक होने से वह इन्कार कर देती है। आज वह किसी भी बन्धन को न मानकर अपने मन और नये विचारों की प्रेरणा से अपने जीवन यापन की दिशा को बदल देती है।

6· बदले की आग में जलता जीवन

श्री विष्णु प्रभाकरजी ने नारी के इस रूप का सफल चित्रण अपने नाटकों में किया है। भारतीय समाज में परिवार का ढाँचा स्त्री-पुरूष सम्बन्ध से ही बना हुआ है। लेकिन दोनों के आपसी अच्छे सम्बन्धों से ही परिवार का विकास सम्भव है। इसलिए समाज में दोनो का भी महत्व है और समाज के अस्तित्व के लिए स्त्री और पुरूष का सहजीवन हमारे लिए जरूरी है। लेकिन पुरूष के सम्पर्क से स्त्री डरती है। क्योंकि पुरूष अहंकारी है। वह स्त्री को अपनी बराबरी की हैसियत की नहीं समझता। पुरूष के भीतर कुछ आकांक्षाएँ, वासनाएँ छिपी हुई, दबी हुई होती हैं जो स्त्री पूरी नहीं कर पाती। उन दोनों के सम्बन्ध बिगड़ जाते हैं। नारी के मन में बदले की भावना जन्म लेती है। नारी के इस रूप का चित्रण विष्णुजी ने अपने कुछ नाटकों में किया है।

"डॉक्टर" नाटक में डॉ·अनीला पति द्वारा तिरस्कृत है। इसी कारण उसके मन में बदले की आग सुलग गई है। अनीला का पति सतीशचन्द्र शर्मा अनीला को कम पढ़ी-लिखी होने के कारण छोड़ देता है। इसमें बेचारी अनीला का कोई दोष नहीं है। सतीशचन्द्र शर्मा का विवाह विद्यार्थी दशा में ही एक सामान्य पढ़ी-लिखी लड़की मधुलक्ष्मी (अनीला) से हो जाता है। सतीशचन्द्र पढ़ाई समाप्त कर इंजिनियर के उच्च पद पर प्रतिष्ठित होता है। वह अब मधुलक्ष्मी को अपने योग्य नहीं समझता। और मधुलक्ष्मी का त्याग कर देता है। मधुलक्ष्मी के मन को गहरी

चोट लगती है और वह बदले की आग में जलने लगती है। इसी प्रबल भावना के कारण डॉक्टरी का अध्ययन करती है। मधुलक्ष्मी अब अनीला नाम रखकर एक नर्सिंग होम खोल देती है। दुर्भाग्यवश सतीशचन्द्र की दूसरी पत्नी एक प्राणघातक रोग से बीमार होने के कारण अनीला के नर्सिंग होम में उपचार के लिए लायी जाती है। अन्तर्मन में तीव्र हलचल उत्पन्न होती है। किसी भी हालत में वह सतीशचन्द्र से बदला लेना चाहती है। वह अपनी सौत का सफल ऑपरेशन न कर शर्मा के सुखी जीवन पर आघात करना चाहती है। शर्मा को तड़पाना चाहती है।

डॉ॰केशव कहता है - "पहचानता हूँ अनी पाँच वर्ष से तुम्हें पहचान रहा हूँ। तुम तिल-तिलकर जलती हो, तुम्हारे हृदय में टीसें उठती हैं तुम्हारी छाती आहों से छलनी हो रही है और तुम इस सत्य को छिपाने के लिए अनथक प्रयत्न करती हो। अन्दर जितनी गहरी पीडा होती है ऊपर तुम उतनी ही करूण बनती हो, उतनी ही हँसती हो। लेकिन तुम्हारी करूणा, तुम्हारी मुस्कान, तुम्हारा हास्य, इन सबका आधार है वही चुनौती। उसी चुनौती ने आज तुम्हें कायर बना दिया। क्योंकि तुम्हारे भीतर बदला लेने की भावना जाग उठी है····लेकिन जब तक इसका रूपान्तर नहीं होगा।"[26]

पति के प्रति बदले की भावना और विफल वैवाहिक जीवन के कारण अनीला के मन में डॉक्टर केशव के प्रति सूप्त कामेष्णा जन्म लेती है। लेकिन लोक-लाज से अनीला कुछ नहीं कहती। जब सौत के ऑपरेशन का समय आता है तो अनीला के मन में कर्तव्य और प्रतिशोध भावना का संघर्ष होता है। तथा सतीशचन्द्र के प्रति तीव्र चुनौती एवं प्रतिशोध की भावनाउत्पन्न होती है लेकिन दादा के समझाने पर और सौत के पुत्र गोपाल के प्रति ममता का भाव उमड़ने पर अनीला अपना फैसला बदलती है। अन्त में प्रतिशोध भावना पर प्रेम और कर्तव्य भावना की विजय होती है। अनीला अपनी सौत का सफल ऑपरेशन कर देती है।

नाटककार ने इस नाटक में नारी प्रतिकार का आदर्श उपस्थित किया है। तथा यह दिखाया है कि नारी के कोमल हृदय में बदले की भावना ज्यादा देर तक नहीं रह सकती। नाटककार विष्णुजी पर गांधीवाद का गहरा प्रभाव था। इसलिए नाटककार ने हिंसा पर अहिंसा की विजय दिखायी है।

"टगर" नाटक की नायिका टगर भी एक बदले की भावना में जलने वाली नारी है। टगर पहले एक सामान्य नारी रश्मि थी। उसका विवाह एक प्रसिध्द साहित्यकार शेखर से हुआ था। रश्मि सुन्दर और जवान थी, लेकिन आधुनिक नहीं थी। वह एक भोली-भाली नारी थी। पति शेखर चाहता था कि रश्मि उसके साथ साहित्य की बातें करे। लेकिन रश्मि के लिए यह बात मुश्किल थी। शेखर ने रश्मि को अपने योग्य नहीं समझा और घर से निकाल दिया। कुछ ही दिनों में दोनों ने तलाक ले लिया। रश्मि बहुत दुखी हो जाती है। उसके सारे सपने टूटकर बिखर जाते हैं। लेकिन उसके टूटे दिल में पति शेखर के प्रति बदले की भावना भड़क उठती है। बदले की आग में वह जलने लगती है। अब वह शेखर से नहीं बल्कि समस्त पुरूष जाती से बदला लेने का निश्चय कर लेती है। रश्मि एक सुन्दर ही नहीं बल्कि वेशभूषा से अत्यन्त मोहक आकर्षण पैदा करने वाली टगर बन जाती है। जो पुरूषों को अपने जाल में फसाकर बरबाद कर देती है। उसके पति शेखर ने उसे आधुनिक न होने के कारण छोड दिया था। इसलिए प्रतिहिंसा की आग में भभक उठी टगर को हर पुरूष शेखर का ही एक रूप नज़र आता था। टगर हमेशा पुरूष से बदला लेने का अवसर ढूँढती थी। आज टगर जख्मी नागिन है, जो किसी न किसी को डसती ही रहती है। ठाकुर और माथुर जैसे भ्रष्टाचारियों को टगर ने अपने प्यार में पागल बनाकर बेनकाब कर दिया। पुरूष जाति से बदला लेना टगर का मकसद बन गया था। क्योंकि टगर पुरूष जाति को गद्दार एवं दगाबाज समझती थी। अन्तमें टगर अपनी जीवन दृष्टि बदल देती है। वह अपने किये पर पछताती है। उसे लगता है कि वह अपने ही बिछाये जाल में फँस गयी है। शेखर के लिए आज भी उसके दिल में प्यार है और टगर का यही प्यार ही उससे यह सब कुछ कराता रहा है। अब टगर इससे मुक्ति चाहती है।

आनन्दी "गान्धार की भिक्षुणी" नाटक का प्रमुख नारी पात्र है जो हुणों से बदला लेना चाहती है। क्योंकि हूण सैनिक नारियों पर अत्याचार करते थे। उनकी इज्जत लुटते थे। एक हुण सरदार ने आनन्दी को भी इज्जत लुटी है। सुन्दर,जवान आनन्दी अपना काला मुँह लेकर जीना नहीं चाहती। क्योंकि शीलभ्रष्ट होने के कारण उसके दिल पर गहरी चोट लग जाती है। लेकिन राजा यशोवर्मन आनन्दी का मन

परिवर्तन करके उसे आत्महत्या से बचाते हैं। अब आनन्दी हुण सरदार का खून पीना चाहती है। अपने पर हुए अत्याचार के कारण प्रतिशोध की आग में जलती है। हुण सरदार से बदला लेना उसके जीवन का मकसद बन गया है। वह एक वीरांगना की भाँति गरज उठती है। मालव नागरिकों को भी अपने साथ विद्रोह करने के लिए तैयार करती है। जो हुणों के घृणित अत्याचार से पीसे जा रहे थे। हुणों ने जनता पर उनके जुल्म ढाये हैं। मालव सैनिकों के सामने उनके माँ-बहनों की इज्जत लुटी है। आनन्दी हुणों का सर्वनाश चाहती है। हुणों को सिसक-सिसक कर मरते देखना चाहती है। मालव नागरिकों के सामने आनन्दी क्रान्ति के गीत गाती है -

"बर्बर हूणों की बस्ती पर
इनकी मदिरामय मस्ती पर
वज्र गिराने आये हैं हम
इनकी जहरीली हस्ती पर।"[27]

एक दिन हूण सरदार आनन्दी और उसके बच्चे को ले जाने के लिए आता है, उसे लगता है कि उसके प्रति आनन्दी के दिल में प्यार हुआ है। आनन्दी के दिल में तो उसके प्रति आग भड़क रही थी। आनन्दी ने उसके प्राण लेने की प्रतिज्ञा की है। वह यशोवर्मन से कहती है, "हूणों ने नारी पर जो अत्याचार किये हैं उसका प्रतिशोध चाहती हूँ मैं।"[28] भड़कती हुई बदले की भावना के कारण आनन्दी सरदार पर टूट पडती है। उसके मरने पर भी उसके बदन में कटार भोंकती ही रहती है। हूण सरदार के बदन को कटार से छन्नी-छन्नी कर देती है। तभी उसके दिल में बदले की आग शान्त हो जाती है।

"नवप्रभात" नाटक की भिक्षुणी हमारे सामने बदले की भावना में जलने वाली नारी के रूप मे आती है। सम्राट अशोक ने कलिंग देश को उजाड़ दिया था। कलिंग के राजा को मारकर राजकुमार को बन्दी बनाया था। इसलिए कलिंग की राजकुमारी सम्राट अशोक से बदला लेना चाहती है। राजकुमारी अशोक का सर्वनाश करने के लिए भिक्षुणी का वेश परिधान करके एक गहरी चाल चलती है। राजकुमारी ने पीले वस्त्र धारण किये हैं लेकिन उसकी वाणी में आग है। वह सम्राट अशोक की हत्या करना चाहती है। जब भिक्षुणी पकड़ी जाती है तो वह अशोक से कहती

है - "मैं प्रतिशोध लेने आई हूँ। किसका प्रतिशोध ? कैसा प्रतिशोध ? सम्राट तुम यदि यह समझते हो कि तुमने कलिंग वासियों का नाश किया है तो तुम भूल करते हो। तुमने उनका नहीं अपना नाश किया है। पराजय उनकी नहीं, तुम्हारी हुई है। कलिंग हारकर भी जीत गया है। तुम जीतकर भी हार गये हो।"[29]

अन्त में सम्राट अशोक को पता चलता है कि भिक्षुणी के वेश में कलिंग की राजकुमारी है, जो उसकी हत्या करने के लिए आयी है। सम्राट अशोक के हृदय पर प्रबल आघात होता है और हृदय परिवर्तन हो जाता है। वह राजकुमार को छोड़ देता है। लेकिन स्वाभिमानी राजकुमार अपनी छाती में कटार भोंककर आत्महत्या करता है। अब तो राजकुमारी की प्रतिशोध भावना और तीव्र हो जाती है। वह सम्राट अशोक का वध करना चाहती है, तो अशोक उसे अपनी कटार देकर बदला लेने से कहता है। इस घटना से राजकुमारी होश में आती है। वह अशोक की हत्या करनी नहीं चाहती।

नाटककार ने इस प्रकार बदले की आग में जलते हुए नारी जीवन का चित्रण किया है। नारी प्रेम का प्रतीक है। वह त्याग, वात्सल्य एवं ममता की देवी है। इसलिए उसके मन में बदले की भावना इतनी तीव्र नहीं है।

7· देशभक्ति और कर्तव्यनिष्ठा में उलझा हुआ नारी जीवन

नाटककार विष्णु प्रभाकरजी के कुछ नाटक इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्वपूर्ण है। आपने इन नाटकों के माध्यम से आज की आधुनिक नारियों से उन क्रांतिकारी नारियों का परिचय कराया है, जिन्होंने अपने देश के लिए अपने प्राणों की बलि दे दी। भारत देश का इतिहास साक्षी है कि भारतवर्ष की सभ्यता, संस्कृति और समृध्दि के लिए आज तक अनेक नारियों ने क्रान्तिकारी कार्यों में पूर्ण सहयोग दिया। आज तक अनेक भारतीय नारियों ने अपने देश पर हुए अत्याचार और अन्याय का सामना करके उन्होंने विदेशी शासकों के रक्त से अपनी क्रान्ति को नहलाया है। अतः प्रभाकरजी ने हमें यह बताने का प्रयास किया है कि नारी अबला नहीं, सबला है। वह आदर्श माता, पत्नी और पुत्री के अलावा एक वीरांगना भी है। अपने देश की स्वाधीनता संघर्षों में नारियों की भूमिका किसी भी दृष्टि से नगण्य नहीं

है। हमारे ही भारत देश की बेटी झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की शौर्यगाथा किसी भी दृष्टि से कम गौरवशाली नहीं है। सुभाषचन्द्र बोसजी के "आज़ाद हिन्द फौज" में नारियों की अलग सेना बनाई गई जिसका नेतृत्व कैप्टन लक्ष्मी ने किया था। ऐसी पराक्रमी देवियों की कथाओं को सूनकर हम भारतवासी गर्व से फूले नहीं समाते।

"केरल का क्रान्तिकारी" इस नाटक में अम्मुकुट्टी एक देशप्रेमी और कर्तव्यनिष्ट नारी रूप में चित्रित हुई है। अम्मुकुट्टी क्रान्तिकारी वेलुत्तम्पी दलवा की प्रेमिका है। लेकिन दोनों ने यह निश्चय किया है कि वे शादी नहीं करेंगे और जीवन भर अपने राज्य की सेवा करेंगे। विलुत्तम्पी दलवा अम्मुकुट्टी को अपनी चेतना मानता है। वह अम्मुकुट्टी से कहता है - "अम्मु तुम परिक्षा लेने देने की परिधि से बहुत ऊपर उठ चुकी हो। तुम्हें तो अब चारिणी बनकर देश को जगाना है। जन-मन में जो असन्तोष उभरा है उसी अमूर्त को मूर्त रूप देकर उन्हें संघर्ष के लिए तैयार करना है। यह समझ लो कि तुम मेरी चेतना हो।"[30] अम्मुकुट्टी क्रान्ति की जागृति का बिगुल बजाती है। वह सभी देशभक्तों को साथ लेकर फिरंगियों को खत्म करना चाहती है। इधर दलवा और फिरंगियों में जंग होती है। लेकिन दलवा फिरंगियों के हाथ आने से पहले ही आत्महत्या करता है। फिरंगी दलवा की लाश को कण्णनमूला में सूली पर लटकाते हैं और सब नागरिकों को धमकाते हैं। अपने प्रियतम के जाने से अम्मुकुट्टी के दिल पर गहरी चोट लग जाती है। वह फिरंगियों को मूर्ख और कायर समझती है। वह दलवा की चेतना को अमर रखकर दलवा का अन्त नहीं मानती, बल्कि फिरंगियों के अन्त का आरम्भ मानती है। वह नागरिकों से कहती है, "हां यह स्वाधीनता की लड़ाई का आरम्भ है और हमने इसकी नींव में अपनी सबसे कीमती वस्तु रखी है और वह कीमती वस्तु है, हमारे प्यारे दलवा का रक्त। उसके गौरव की रक्षा होनी चाहिए। और मैं जानती हूँ इतिहास उसकी रक्षा करेगा। फिरंगी कुछ दिन हमें परेशान कर सकते हैं लेकिन फिर वही होगा जो सदा होता आया है।"[31]

अम्मुकुट्टी साहसी क्रान्तिकारी नारी है। जो अपने प्रियतम की तरह स्वाधीनता की बलिवेदी पर रक्त बहाना चाहती है। लेकिन अपने प्रियतम के जाने का सदमा और देशप्रेम की उत्कट भावना उसे पागल बना देती है। उसे लगता

है कि उसका प्यारा दलवा हर आने वाले स्वाधीनता सेनानी में जियेगा। और तब तक जियेगा जब तक इस देश से अत्याचारी फिरंगियों का नाश नहीं हो जाता। अम्मुकुट्टी पागल है, फिर भी उस पर क्रान्ति का भूत सँवार है। उसे लगता है कि वह विद्रोहियों का नेतृत्व ही कर रही है। वह इस प्रकार नारे लगाती हुई गाती है -

"देश की आजादी जिन्दाबाद।
हमारी स्वतंत्रता अमर रहे।
बढ़े चलो, बढ़े चलो
चलो नयी मिसाल हो,
चलो नयी मशाल हो,
चलो नया कमाल हो,
बढ़े चलो बढ़े चलो।"[32]

यह गीत सुनने के बाद बालन पिल्लै अपने सैनिकों के साथ अम्मुकुट्टी को पकड़ने के लिए आते हैं। लेकिन अम्मुकुट्टी उनके हाथ नहीं लगती।

"गान्धार की भिक्षुणी" नाटक की आनन्दी, मालवी और भारती आदि नारी पात्र क्रान्तिकारी नारी पात्र हैं। आनन्दी मालव नागरिकों को क्रान्ति के लिए जगाती है। उन्हें अपने साथ लेकर हुणों के लिए व्यूह रचना करना चाहती है। जिन हुणों ने आनन्दी की इज्जत लुटी है, मालव नारियों पर मनमाने अत्याचार किये। उनके विरूध्द राजा यशोवर्मन और आनन्दी एक क्रान्तिकारी संघ बनाना चाहते हैं। हूणों से प्रतिशोध लेकर अपनी धरती माता को बेडियों से मुक्त करना चाहते हैं। मिहिर कुल के अत्याचारों की मूर्तिमयी प्रतिमाओं में आनन्दी और मालवी प्रमुख हैं। इसलिए इन दोनों नारियों के दिल में आग भभक उठी है। आनन्दी उसी हूण सरदार का इतनी बेरहमी से कत्ल कर देती है कि हूण सरदार के मरने पर भी उसके शरीर को कटार से छन्नी-छन्नी कर देती है। जिसने आनन्दी की इज्जत लुटी थी। फिर भी आनन्दी की क्रोध भावना शान्त नहीं हो गयी है। आनन्दी माँ से कहती है , "मैं रक्त की प्यासी हूँ माँ, उन हूणों के रक्त की प्यासी हूँ जिन्होंने विहारों को उजाड़ दिया, निर्दोष व्यक्तियों की हत्याएँ की, नारियों का

शील हरण किया। ये पापी राक्षस हत्यारे····।"[33]

राजा यशोवर्मन के साथ मिलकर आनन्दी, भारती, मालवी सब क्रान्ति की तैयारी में लगी हुई हैं। एक दिन अचानक सब मिहिरकुल और उसके सैनिकों पर टूट पडते हैं। इसमें आनन्दी और मालवी ने भी सैनिक का वेश धारण किया है। दोनों भी नारियाँ अपने शत्रुओं पर तलवार से वार करती हैं। जब यशोवर्मन हूण सैनिकों से घिर जाता है तो आनन्दी यशोवर्मन को बचाती है। लेकिन यशोवर्मन पर हूण सैनिक का किया हुआ वार आनन्दी के वक्ष के नीचे पडता है। आनन्दी घायल हो जाती है। इस घायल अवस्था में वह मालवी को अपना स्वप्न बताती हुई कहती है, "सुन। मैंने सपना देखा। मैं किसी अंजाने देश में पहुँच गयी हूँ। अपना होकर भी अपना नहीं लग रहा था। रूप, रंग, सज्जा, व्यवहार सभी कुछ तो बदला हुआ था। मैंने पूछा, "कौन-सा देश है ?" उत्तर मिला, "भारत गणतंत्र।' मैंने पूछा, "क्या यहाँ राजा नहीं है ?" उत्तर मिला, "पहले थे, पर वे खत्म कर दिये गये, लेकिन वैसे यहाँ अब भी राजा हैं। पहले एक होता था, अब सब राजा हैं। पहले वे ईश्वर के प्रतिनिधि थे। अब जनता के हैं। झुठे सपने दिखा-दिखाकर अपने को चुनवा लेते हैं और चार-पाँच साल तक दोनों हाथों से लुटते हैं। मुख पर सबके प्रजातंत्र हैं पर शरीर में सबके प्रजा और शासक दोनों के, सामन्ती रक्त हैं। राजाओं से अधिक सुख भोगते हैं, वे राजाओं से अधिक प्रजा उनकी चाटूकारी करती हे···।" न जाने क्या क्या कहा उसने। कुछ समझ न पायी, पर कहते हैं जो कुछ हम सपनों में देखते हैं वह या तो हो चुका होता है या कभी आगे होने वाला होता है।"[34]

इस प्रकार आनन्दो अपने सपने की हकीकत मालवी को सुनाकर आज के शासकों पर तीखा व्यंग्य कसती है। जब यशोवर्मन हूणों की शक्ति टूटने की खबर आनन्दी को सुनाते हैं, तो आनन्दी को बड़ा हर्ष होता है। आनन्दी का व्रत पूरा हो जाता है। मालवा की जनता हूणों के अत्याचार से मुक्त होती है। यशोवर्मन आनन्दी को विजय की देवी कहते हैं। सभी आनन्दी को प्रणाम करते हैं। भारती को अपनी गुरू जाने के कारण बड़ा दुःख होता है। मालवी भारती को कौली में भर लेती है। भारती आज़ादी के गीत गाती है, लगता है मानो आनन्दी ही गा

रही है।

इसप्रकार नाटककार ने आनन्दी को क्रान्तिकारी नारियों का नेतृत्व करने वाली उस युग की वेदना और बलिदान की देवी के रूप में चित्रित किया है।

"नवप्रभात" नाटक की भिक्षुणी अपने देश कलिंग का संहार करने वाले अशोक के विरुद्ध विद्रोह करती है। उसे अपने उजड़े हुए देश से भी प्यार है। देश में बचे हुए वृध्द, बच्चे और विधवा नारियों का नेतृत्व करना वह अपना कर्तव्य समझती है। वह कलिंग की राजकुमारी होकर भी कलिंगवासियों के लिए भिक्षुणी का वेशधारण करती है। अपने देश को सुनसान बनाने वाले सम्राट अशोक के प्रति बदले की भावना आज भी उसके दिल में आग उगलती है। राजकुमारी भिक्षुणी बनकर उन आहत आत्माओं का प्रतिनिधित्व करती है जो अनाथ बनी हुई हैं। राजकुमारी अशोक के सैनिकों द्वारा पकड़ी जाती है। राजकुमारी अपने शब्दों के बाणों से ही अशोक को घायल कर देती है। राजकुमारी के शब्दों से अशोक के हृदय पर प्रबल आघात होता है। अशोक को लगता है कि वह जीतकर भी हार गया है। वह राजकुमार और राजकुमारी को छोड़ना चाहता है। लेकिन कलिंग देश का पुत्र और पुत्री अपने जीवन से अपने देश को प्रेम करते हैं। स्वाभिमानी राजकुमार अपने छाती में कटार भोंककर आत्मबलिदान करता है। राजकुमारी इस घटना से और भी क्रोधित हो जाती है। वह भी अपने भाई की तरह स्वाभिमानी है। वह अशोक से प्रतिशोध लेकर देश के नाम पर मिटना चाहती है। राजकुमारी भिक्षु उपगुप्त से कहती है, "मैं नहीं चाहती तथागत का व्रत। ले लो अपने वस्त्र। मैं राजकुमारी बनना चाहती हूँ। मैं फिर साधारण नारी बनना चाहती हूँ। मैं प्रतिशोध लेना चाहती हूँ। मैं कलिंग के इस निर्मम महानाश का प्रतिशोध लेना चाहती हूँ। मैं हत्यारे अशोक का वध करना चाहती हूँ।"[35] राजकुमारी एक सच्ची देशभक्त और कर्तव्यनिष्ठ नारी है।

"कुहासा और किरण" नाटक में सुनन्दा और प्रभा ये दोनों ऐसी देशभक्त नारियाँ हैं, जो देश के लिए काम करना अपना कर्तव्य समझती है और भ्रष्टाचारियों के मुखौटे उतार देती है। कृष्णचैतन्य नेता है, तो उनके दोस्त उमेशचन्द्र एक जाने-माने और सम्माननीय समाज सेवक हैं। विपिन बिहारी सम्पादक हैं। ये तीनों भी भ्रष्टाचारी व्यक्ति हैं। वास्तव में ये सभी काला-बाजार से जुड़े हुए हैं। लेकिन समाज

के लिए इनके अलग ही मुखौटे हैं। समाज की लोकप्रियता का लाभ तीनों ने भी उठाया है। सुनन्दा कृष्णचैतन्य की प्रायव्हेट सेक्रेटरी है। लेकिन उसे देशद्रोहियों से सख्त नफरत है। सुनन्दा देशप्रेमी चन्द्रशेखर की पत्नी मालती को उसकी पेन्शन दिलाने की कोशिश करती है। कृष्णचैतन्य जैसे मुखौटे लगाये देशद्रोहियों की पोल खोलना चाहती है। अपने जमीर को दिलोजान से चाहने वाली और अन्याय के विरूद्ध लड़ने वाली स्वाभिमानी नारी है। उसकी सहेली प्रभा भी उसे मदद करती है। प्रभा एक साहसी और सच्ची साहित्यकार है जो अपने साहित्य से आम आदमी को जगाना चाहती है, उसमें एक नया उत्साह भरने की पूरी कोशिश करती है। प्रभा कृष्णचैतन्य, उमेशचन्द्र और विपिन बिहारी इन तीनों को अपने साहित्य के बारे में कहती है, "लेकिन मुझे दर्शन में कोई रूचि नहीं है। मैंने अपने उपन्यास में एकदम आज की समस्या को लिया है। यह महिला आन्तर्राष्ट्रीय वर्ष है। विश्व भर में नारी के अधिकारों की चर्चा है। मैंने अपने उपन्यास में एक ऐसी युवती की कहानी कही है जो पुरूषों की तरह अपने पैरों पर खड़ा होने का निर्णय करती है और उस क्रम में उसे जो अनुभव होते हैं उन्हीं पर आधारित है, यह मेरा उपन्यास। उन अनुभवों के बारे में जानकर सारा संसार चकित रह जायेगा। उसे पता लग जाएगा कि पुरूष-शासित आज के समाज में नारी कैसी विडम्बना में जी रही है। पुरूष कहता तो यह है कि जहाँ नारियों की पूजा होती है वहाँ देवता रमन करते हैं। परन्तु समझता है आज भी उसे चरण-दासी। पर वह यह भूल गया है कि नारी आज जाग चुकी है। वह मात्र माँ-बहन-पत्नी और पुत्री नहीं है। "नारी" भी है। पहले नारी है, पीछे, कुछ और। बातों और आश्वासनों में उसे विश्वास नहीं रहा है। वह अधिकार माँगती नहीं है, वह तो···।"[36]

प्रभा को जब इन देश के गद्दार एवं भ्रष्टाचारियों का पता चलता है तो वह अपने उपन्यास की रूपरेखा में बदल करके मुखौटे लगाये मुखवीरों को, भ्रष्टाचारियों को और देश में फैले स्वैराचार को बेनकाब करना चाहती है। उसे लगता है एक दिन इस भ्रष्टाचार और गुण्डागर्दी का जोर नहीं चलेगा। सबका नाश होगा नहीं होगा नहीं तो करना होगा। मालती का पति चन्द्रशेखर इसलिए पराधीन भारत की वेदी पर बलि चढ़ गया था कि देश को आज़ादी मिले। लेकिन इस आज़ाद देश में दुखिया मालती को पति की पेन्शन तो नहीं मिलती, बल्कि उसके बेटे अमूल्य

पर चोरी का इल्जाम लगाकर इसलिए फँसाया जाता है कि कहीं वह भ्रष्टाचारियों को बेनकाब न कर दे। प्रभा और सुनन्दा दोनों भी देशभक्त नारियाँ ऐसे अत्याचार को सह नहीं पाती हैं। दोंनो मिलकर इन्साफ की आवाज उठाती है। अन्त में प्रभा और सुनन्दा की वजह से सभी भ्रष्टाचारियों का असली रूप जनता के सामने आता है। नेता, सम्पादक और समाजसेवक तीनों को भी पुलिस गिरफ्तार करके जेल भेजती है। इस प्रकार प्रभा और सुनन्दा निर्भिक, देशभक्त और देश की कर्तव्य-निष्ठ नारियाँ हैं।

नि ष्क र्ष

1· श्री विष्णु प्रभाकरजी ने अपने नाटकों में प्रतिबिंबित नारी-जीवन के विविध पहलुओं का चित्रण किया है।

2· नाटककार ने नारी-जीवन में आने वाली बहुत-सी समस्याओं को उजागर किया है।

3· इन्होंने अपने नाटकों में आधुनिकता के नाम पर चलने वाली विडम्बनात्मक परिस्थितियों का नारी-जीवन से सम्बन्ध किया है।

4· नाटककार ने अपने नाटकों में यह भी स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है कि आज की आधुनिक नारी ने परम्परा की सीमाओं को लाँघकर उस नरकमय जीवन का त्याग किया है। नाटककार ने यहाँ प्राचीन मान्यताओं तथा विचारों पर नवीन मान्यताओं एवं विचारों की विजय दिखाई है।

5· नाटककार ने नारी जीवन को केवल वर्तमान के वर्तमान के दृष्टि से ही नहीं बल्कि उन्होंने अतीत के कोने में भी झाँका है और इतिहास को नये दृष्टिकोन से देखकर नारी जीवन के बड़े सटीक चित्र उपस्थित किये हैं।

6· श्री विष्णु प्रभाकरजी ने नाटकों द्वारा नारी-जीवन को एक आन्दोलन का रूप देकर भारतीय संस्कृति एवं सामाजिक परिवेश के अनुकूल उसका चित्रण किया है।

संदर्भ-सूचि

1. ये रेखाएँ ये दायरे - विष्णु प्रभाकर, पृ॰26
2. युगे-युगे क्रान्ति (नाटक) - विष्णु प्रभाकर, पृ॰48-49
3. मेरे श्रेष्ठ रंग : एकांकी - विष्णु प्रभाकर, पृ॰48
4. हिन्दी समस्या नाटक - डॉ॰मान्धाता ओझा, पृ॰116
5. विष्णु प्रभाकर के नाटक-भाग 4, पृ॰223
6. वही, पृ॰233
7. कलाकार का सत्य - विष्णु प्रभाकर, पृ॰61
8. विष्णु प्रभाकर : व्यक्ति और साहित्य - सं॰डॉ॰महीप सिंह, पृ॰89
9. अब और नहीं (नाटक) - विष्णु प्रभाकर, पृ॰62
10. वही, पृ॰61
11. वही, पृ॰91
12. युगे-युगे क्रान्ति (नाटक) - विष्णु प्रभाकर, पृ॰44
13. टूटते परिवेश (नाटक) - विष्णु प्रभाकर के नाटक भाग 4, पृ॰206
14. गांधार की भिक्षुणी (नाटक) - विष्णु प्रभाकर, पृ॰81
15. वही, पृ॰81
16. कलाकार का सत्य - विष्णु प्रभाकर
17. बन्दिनी (नाटक) - विष्णु प्रभाकर, पृ॰43
18. समकालीन संवेदना और हिन्दी नाटक - डॉ॰शेखर शर्मा, पृ॰93
19. बन्दिनी (नाटक) - विष्णु प्रभाकर, पृ॰60
20. टगर (नाटक) - विष्णु प्रभाकर, पृ॰18
21. वही, पृ॰65
22. विष्णु प्रभाकर के नाटक भाग-4, पृ॰235
23. युगे-युगे क्रान्ति - विष्णु प्रभाकर, पृ॰69
24. समकालीन संवेदना और हिन्दी नाटक - डॉ॰शेखर शर्मा, पृ॰36
25. अब और नहीं (नाटक) - विष्णु प्रभाकर, पृ॰59-60
26. डॉक्टर (नाटक) - विष्णु प्रभाकर, पृ॰102

27· गान्धार की भिक्षुणी (नाटक) - विष्णु प्रभाकर, पृ·27

28· वही, पृ·54

29· नवप्रभात (नाटक) - विष्णु प्रभाकर, पृ·71

30· केरल का क्रान्तिकारी - विष्णु प्रभाकर, पृ·23

31· वही, पृ·98-99

32· वही, पृ·99

33· गान्धार की भिक्षुणी (नाटक) - विष्णु प्रभाकर, पृ·60

34· वही, पृ·78

35· नवप्रभात (नाटक) - विष्णु प्रभाकर, पृ·101-102

35· कुहासा और किरण (नाटक) - विष्णु प्रभाकर, पृ·26-27